संचार के प्रकार प्राचीन काल में भी थे और समाज आज भी विश्व के प्रत्येक समाज में हमें संदेशों के आदान-प्रदान के रूप में मिलते हैं। संचार के इन विभिन्न प्रकारों का वर्णन निम्नांकित है-

(१) स्वगत संचार -

इसके अन्तर्गत व्यक्ति का विचार, चिन्तन-मनन आदि सम्मिलित हैं। स्वयं के अनुभव, विचार और भावों आदि के आधार पर व्यक्ति भूत, वर्तमान एवं भविष्य के सम्बन्ध में किसी घटना के प्रभाव और परिणामों का स्वयं मूल्यांकन करता है। मनुष्य की पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (आँख, कान, नाक, जिव्हा और त्वचा) और पाँच कर्मन्द्रियाँ-आँखें-बाहरी दृश्यों को देखकर, कान आवाजों को सुनकर, नाक सूंघकर, जिव्हा स्वाद लेकर और त्वचा स्पर्श के द्वारा बाह्वाजगत के अनुभवों को अन्तर्जगत (मन मस्तिष्क) को पहुँचाती रहती हैं और मन-मस्तिष्क प्रत्येक इन्द्रिय के अनुभूत विषय को ग्रहण कर कर्मन्द्रियों को कार्य करने के लिए उत्तेजित और प्रेरित करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक मनुष्य में संचार की यह स्वाभाविक प्रक्रिया निरन्तर गतिमान रहती है। इसी कारण संचार एक सूचना-विज्ञान है क्योंकि यह मनुष्य की बाहमा और आन्तरिक सूचनाओं की प्रक्रियाओं का भी अध्ययन करता है। अर्न्तगत में होने वाला यह संचार वस्तुतः मानव-समाज में होने वाले प्रत्येक प्रकार के संचार केन्द्र है। इसके बिना सभी अन्य संचार असम्भव हैं। इसी के सहारे सभी संचार मानव-समाज में संचालित होते हैं। स्पष्ट है कि स्वागत संचार अन्य प्रकार के संचारों का केन्द्रीय अथवा प्राण तत्व है ।

इसी प्राण तत्व से ऊर्जा लेकर ही अन्य संचार संचालित होते हैं। उदाहरण के तौर पर समाज में अन्य किसी व्यक्ति से सम्बन्ध स्थापित करने से पहले कोई भी व्यक्ति अपने मन में आप से मिलने की और बात करने की भूमिका बाँधता है और जब वह उस व्यक्ति के साथ मिलकर बातचीत करता है उस समय स्वगत संचार अवस्था में सोची हुई बातों पर विशेष ध्यान देने का प्रयत्न करता है। मनुष्य विदेश अथवा दूर रहकर भी स्वगत संचार-प्रक्रिया के द्वारा अपने परिजनों और सम्बन्धियों से जुड़ा रहता है। ईश्वर अथवा किसी अन्य दैवी शक्ति के समक्ष आँखे बन्द करके प्रार्थना करते समय भी कोई व्यक्ति अपने आंतरिक धरातल पर स्वागत संचार ही कर रहा होता है। ऐसी अवस्था में उसके मन से निकली सच्ची आवाज ही उस व्यक्ति की मददगार साबित होती है-यह प्रायः देखने और सुनने में आता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मनुष्य के अर्न्तगत में होने वाले स्वगत संचार अन्य सभी संचारों का मूल तथा ज्ञान-विज्ञान का आदि स्त्रोत है। आत्म-विवेचन, आत्मविश्लेषण और अन्तर्द्धन्द्ध अन्तर्मन के दायरे में ही सम्पन्न होते हैं। अपने निजी अनुभवों, विचारों और स्मृतियों के आधार पर व्यक्ति मन ही मन अपने सम्पर्क में आए बाहय जगत पर चिन्तन मनन करता है। इस प्रकार स्वगत-संचार के आभाव में पूरी संचार प्रक्रिया ही पंगु तथा अस्तित्व हीन है।

(२) अन्तर्वैयक्तिक संचार-

यह संचार दो या दो अधिक व्यक्तियों के छोटे से समूह के भीतर घटित होता है। इसमें सम्प्रेषक द्वारा प्रेषित सूचना अथवा संदेश सीधे श्रोता द्वारा ग्रहण किया जाता है। इसके अन्तर्गत छोटे समूह के संचार को भी सम्मिलित करते हैं, जिसमें फीडबैक (प्रतिपुष्टि) तुरन्त सम्भव हो। पाँच से दस व्यक्तियों के लघु समूह में होने वाले संचार को भी अन्तर्वैयक्तिक संचार कहा जाता है क्योंकि इस प्रकार के समूह में प्रतिपुष्टि तुरंत होती है। प्रतिपुष्टि तुरंत होना ही इस संचार का प्रमुख गुण या विशेषता है। इस प्रकार के संचार में पैनल डिस्कशन चर्चा-परिचर्चा आदि आते हैं, क्योंकि इसमें सम्मिलित प्रत्येक व्यक्ति अपने संप्रेषण एवं ग्रहण व्यवहार के कारण संप्रेषक एवं प्राप्तक की दोहरी भूमिका निभाता है। इस प्रक्रिया में संदेश मुस्कराहट, स्पर्श, आवाज, आदि के द्वारा प्रेषित कर सकते हैं। कुछ स्थितियों में संप्रेषक और प्रापक का आमने-सामने होना भी आवश्यक नहीं है। पत्र-व्यवहार, टेलीफोन अथवा टेलिकान्फ्रेसिंग इसी श्रेणी में आते हैं। इसमें संप्रेषक और प्राप्त कर दोनों एक दूसरे से दूर होते हैं।

(३) समूह संचार -

समूह में होने वाली संचार-प्रक्रिया को समूह संचार कहा जाता है। समूह मनुष्यों को ऐसा समूह है, जो निश्चित उद्देश्य के लिए गठित होता है। तथा लोग इसी हित या उद्देश्य के लिए इकट्ठा होतें हैं। अपने हितों एवं उद्देश्यों तथा प्रकृति के अनुसार समूह कई प्रकार के होते हैं। जैसे-किसानों का समूह, छोत्रों का समूह, खिलाड़ियों का समूह जब बात करता है तो उनकी रूचियाँ और लक्ष्य समान होते हैं। इस प्रकार समूह-संचार की प्रक्रिया स्थान, क्षेत्र, जाति और भाषा के आधार पर भी हो सकती है। इसके सदस्यों की संख्या ५ अथवा ४० से अधिक होती है, इसीलिए समूह के सदस्यों में तुरन्त प्रतिपुष्टि या फीड बैक सम्भव नहीं होती। ऐसी स्थिति में समूह की पहचान का तरीका केवल हित और उद्देश्य ही होता है।

इसी के कारण किसी भी समूह की अपनी पहचान होती है। प्राचीन भारत में भी समूह संचार के पारंपरिक तरीके थे, जिनकी अलग-अलग पहचान और उद्देश्य थे और उनका प्रभाव भी व्यापक था। इसमें राम कथा, रामलीला, कथावाचकों द्वारा पुराणों का वाचन, योगाचायी द्वारा योग-शिक्षा, गुरूकुल-शिक्षा आदि प्रमुख उदाहरण हैं। आधुनिक काल में समूह संचार फिल्म फोरम, सामूहिक वाद विवाद, रंगमंच पर नाटक का सामूहिक अवलोकन संगोष्ठियाँ सांस्कृतिक कार्यक्रम जैसे-नाटक, कवि सम्मेलन, वाद-विवाद,उत्सव और सभाएँ आदि मुख्य रूप हैं। समूह का निर्धारण आर्थिक राजनीतिक एवं धार्मिक आधार पर भी हो सकता है। समूह संचार में अन्य संचारों की भाँति कुछ मौलिक और आधारभूत तत्व हैं। इसी कारण संचार का यह रूप अन्य रूपों से भिन्न प्रकार का है।

(४) जनंसचार-

'जन संचार' अंग्रजी के शब्द 'मास कम्युनिकेशन' का हिन्दी रूपांतर है। 'मास' का अर्थ 'बहुजन' से है, जबकि कम्युनिकेशन का तात्पर्य संचार से लिया जाता है। विग्रह के आधार पर जनसंचार का अर्थ हुआ वह जो बहुजन अर्थात जन-जन में संचरण करे अथवा वह जो जन-जन में यानी अधिसंख्य लोगों में किसी माध्यम विशेष से संचरित अथवा प्रसारित हो तब उसे जनसंचार की स्थिति कहेंगे। जनसंचार वह संचार है, जिसमें सन्देश /सूचना विस्तृत क्षेत्र में बिखरे लोगों तक जनसंचार माध्यमों (समाचार पत्र, रेडियों, टेलिविजन) के द्वारा पहुँचता है।

आक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार यजन का अभिप्राय पूर्ण रूप से व्यक्तिवादिता या व्यक्तिगत पहचार के अंत से है। इस प्रकार जनसंचार विस्तृत क्षेत्र में फैले श्रोतोओं तक एक समय में जनमाध्यमों द्वारा सूचना सम्प्रेषित करने की प्रक्रिया है। जनसंचार माध्यमों के सेटेलाइट से जुड़ने से पहले इसमें सहभागिता तुरन्त नहीं हो पाती थी परन्तु अब (अन्तर्राष्ट्रीय जाल) ने इस समस्या का भी समाधान प्रस्तुत कर दिया है। इस विश्वव्यापी जाल ने वास्तव में विश्व को एक परिवार में बदलने की प्रक्रिया को मूर्त रूप प्रदान किया है। अब व्यक्ति सूचना ही नहीं बल्कि संवेदनाओं के परस्पर आदान-प्रदान में भी निकट आया है। आज जनसंचार के विकास ने भौगोलिक एवं समय की सीमा को तोड़ दिया है।

(५) परम्परागत संचार-माध्यम-

वे माध्यम जो पीढ़ी दर पीढ़ी विकसित होते आए है और समाज में जिनकी प्रासंगिकता आज भी किसी न किसी रूप में बनी हुई है, परम्परागत संचार माध्यम कहते हैं। प्राचीन काल में हमारे देश मे संचार-माध्यम यांत्रिक न होकर व्यक्तिपरक थे। यदि पौराणिक कथाओं मे विश्वास करें तो नारद मुनि ही देवताओं और मनुष्यों के बीच संचार बनाए रखने के प्रमुख माध्यम थे।

इसी तरह अविश्वसनीय लगने वाली आकाशवाणियों की भी चर्चा की जा सकती है। महाभारत में तो नेत्रहीन धृतराष्ट्र के सम्मुख आँखों देखा हाल सुनाने के लिए संजय की चर्चा आज भी की जाती है। वैदिक युग में विद्वानों के बीच होने वाले शास्त्रार्थ और वाद-विवाद ही संचार के प्रमुख साधन माने जाते थे। इनके अलावा साधु-संतों के द्वारा उपदेश देने और चारण-भाटों द्वारा यशोगान करने को भी एक प्रकार का संचार माना जाता था। बाद मे तीर्थस्थल, मंदिर, मङ्ग आदि संचार के माध्यम बन गए। धार्मिक उत्सवों, मेलो और त्योहारों में कथा कहने, मठों-विहारों में धार्मिक-प्रवचन करने वाले भी संचार-माध्यम का ही काम करते थे। इनका विस्तार विभिन्न स्थानीय क्षेत्रों तथा जाति वर्ग तक ही सीमित था। धीरे-धीरे लोक नाट्यों, लोक गीतों, कठपुतली कला के रूप में इनका विकास और प्रसार हुआ।

प्राचीनकाल में मनोरंजन द्वारा शिक्षा ही प्रमुख रूप से परंपरागत संचार के माध्यम थे। अतएव मोटे रूप में इन परम्परागत माध्यमों को निम्नांकित ढंग से वर्गीकृत किया जा सकता है-

४. चित्रकला- चित्र, शादी-ब्याह अथवा उत्सव में घर-आँगन में बनाए जाने वाली चित्रकला मूर्तिकला शिलालेख अथवा दस्तकारी आदि।

२. लोक नृत्य-

ये लोक जीवन के उल्लास की सशक्त अभिव्यक्ति है। इनकी प्रस्तुति में वैयक्तिक और सामाजिक जीवन को महत्वपूर्ण घटनाएँ ताल और लय के माध्यम से और हाव-भाव व अंग-संचालन से अभिव्यक्ति की जाती है। भावनाओं की अभिव्यक्ति और भावोत्पत्ति के लिए नृत्य एक नैसर्गिंग है। सदियों पहले से मनुष्य को अपने आनन्द मंगल को अभिव्यक्त करने लिए भंग-भगिमाओं का जो प्रदर्शन करता है, वह लोक नृत्यों के रूप में सामने आया है।

३. लोक गीत-

'लोक गीत' वस्तुतः लोक की धरोहर है, किसी व्यक्ति की नहीं उनमें लोक के कल्याण की इच्छा निहित होती है। ये अपने मूल में समूह के साथ जुड़े होते हैं। इनमें शब्द, स्वर, ताल, लय छन्द सभी सामूहिक रूप लिए होते हैं। ये किसी भी समाज व संस्कृति के दर्पण, रक्षक व पोषक, होते हैं।

भारत में यह मान्यता चली आ रही है कि बिना गीत के कोई रीत नहीं होती है। भारत में जन्म से लेकर मृत्यु तक लोकगीतों की परम्परा को देखा जा सकता है। सरलता, सरसता, मधुरता और लयबद्धता लोकगीतों के वे प्राण तत्व हैं जिनके कारण पीढ़ी-दर-पीढ़ी ये शीघ्र कंठस्थ हो जाते हैं। तन्मयता गेयता संक्षिप्तता, भावात्मकमता और कोमलता के कारण लोकगीतों लोकमानस में अपनी जगह बनाई है। ये लोकगीत बच्चे के जन्म पर, छठी, सोहर से लेकर विवाह के गीत और फिर मृत्यु के समय गाए जाने वाले गीत-लोकमानस की संजीवनी शक्ति हैं। हर मौसम में, दिन और रात के प्रत्येक प्रहर में ये लोकगीत मन की लय के मुताबिक गाए जाते हैं।

४. लोककथा-

लोककथाएँ भी परम्परा से चली आ रही हैं। प्राचीनकाल से ही मनुष्य में अपनी अनुभूतियों को कथा के रूप में बाँचकर समझाने का प्रयत्न किया है। शास्त्रों और पुराणों में ऐसी लोककथाओं के अनेक रूप मिलते हैं। श्रुत परम्परा के रूप में लोककथाएँ मुख्य रूप से धार्मिक, व्रत- अनुष्ठान, चरित्र, पेड़-प्रकृति आदि के रूप में अपना आकार प्रकट करती हैं। इसीलिए इन लोककथाओं को बाँचनें वाले पारम्परिक कथाकरों की समृद्ध परम्परा हमारे देश में मिलती है। ये कथाएँ पाठक /श्रोता के मन में कौतुक

व जिज्ञासा का संचार करके इतनी जीवन्त और जानदार होती है कि रसिक को अधीर बनाए रखती है। 'बैताल पच्चीसी' की कहानियाँ भी इसी के अन्तर्गत ली जा सकती है।

५. लोकनाट्य-

मनोरंजन एवं सामाजिक शिक्षा के लिए मंच पर की गई सामूहिक अभिव्यक्ति ही लोकनादयों का आधार है। इस सामूहिक अभिव्यक्ति में नाट्य दल के साथ-साथ दर्शकों की भी सक्रिय भागीदारी होती है। इसीलिए लोकनाटयों मे सभी दर्शकों की कल्पना-शक्ति पर अटूट विश्वास रखकर प्रदर्शन किया जाता है। इसीलिए परम्परागत धार्मिक मान्यताओं एवं स्थानीय मान्यताओं का प्रभाव लोकनाट्यों की प्रस्तुति पर विशेष रूप से पड़ता है।

(६) कठपुतली-

कठपुतली (काठ की पुतली) वह निर्जीव रचना है जो मानवीय संचालन द्वारा सजीव होने का आभास देती है। मानवीय प्रयासों के संचालन में निर्जीव रचना का सजीव होने का आभास देते हुए दर्शकों एवे पुतली में तादात्म्य स्थापित होना पुतली कला की विशेषता है। यह विशेषता तब और सफल होती है जब पुतली के संचालन से दर्शकों में वास्तविक अभिव्यक्ति का भ्रम उत्पन्न हो और संचालनकर्ता, उसकी पुतली और उसकों देखने वालों में भावनात्मक धरातल पर भी परस्पर भागीदारी हो।

पुतली का कोई भी प्रदर्शन जब इस उद्देश्य को प्राप्त कर लेता है। तब वह उत्कृष्ट प्रदर्शन होता है। इस उपलब्धि के फलस्वरूप यह कला आज भी। महँगे इलैक्ट्रानिक माध्यमों (टेलिविजन) में आज भी कार्टून के रूप में विकसित है। सब टी.वी. का 'गुस्ताखी माफ' प्रोग्राम जो नेताओं की नीच मानसिकता का पर्दाफाश करता है-कहीं न कहीं कठपुतली कला के दर्शकों के मन पर पड़ने वाले अमिट प्रभाव से प्रभावित है।

परम्परागत संचार-माध्यमों की सीमाएँ एवं प्रभाव-

उपर्युक्त ये सभी माध्यम कठपुतली को छोड़कर सजीव माध्यम हैं, क्योंकि संदेश देने वाले और संदेश देने वाले और संदेश प्राप्त करने वाले के बीच जन-संप्रेषक एक भावानात्मक सेतु का काम करता है क्योंकि सम्प्रेषक और प्रापक समूह की भाषा, वेशभूषा, संस्कृति, सामाजिक स्थिति, व्यक्तिगत एवं सामूहिक समस्या, मानसिक एवं शैक्षणिक स्तर, सोच-समझ से भली भाँति परिचित रहता है। इसलिए संदेश को वह संवेदना के साथ देने की क्षमता रखता है। चूँकि ये माध्यम प्रत्यक्ष होते हैं।

अतएव हितग्राही की समस्या का तुरन्त समाधान करने की क्षमता रखते हैं। इनमें आदान-प्रदान की पूरी संभावना बनी रहती है। इसलिए इनके द्वारा प्रसारित संदेश के प्रभाव की निश्चितता के बारे में

संदेश की गुंजाइश नहीं रहती लोगों की सामूहिक भागीदारी के साथ बिना किसी ताम-झाम के उनकी प्रस्तुति होती है। अतएव इस पर होने वाला खर्च नगण्य होता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि मूल कथानक से हटकर समकालीन समस्याओं का समावेश कर पुनः मूल कथानक पर प्रस्तुति प्रारम्भ हो जाती है। कहीं-कहीं मूल चरित्र में स्थानीय पात्रों के चरित्र के अभिनय की छवि दिखाकर सामाजिक सुधार का प्रयास भी होता है।

आँचलिक भाषा, वेशभूषा, सामाजिक मान्यताओं एवं परम्पराओं के अनुरूप इनके प्रदर्शन स्थानीय दर्शकों पर अपना प्रभाव छोड़ते हैं। इसी लिए इनकी लोकप्रियता में कमी नहीं आने पाती है।

प्रभाव-

परम्परागत जनसंचार माध्यमों के प्रभाव की सीमा या पहुँच भले ही कम हो, लेकिन इनसे होने वाले परिणाम को कोई नकार नहीं सकता। ये माध्यम निरक्षर जन समुदाय पर भी अपना असर डालते हैं। लोकनाट्यों में पात्र भले ही पौराणिक या ऐतिहासिक रहे हों, लेकिन उनका संप्रेषणीय चरित्र अंत्याचारी का विरोध करने पर उभरा है। देश को स्वतंत्र कराने में इस माध्यम ने अभिनय से लोगों में जोश भरा 'अंधेर नगरी' जैसे नाटकों के द्विअर्थी संवादों ने संप्रेषण कर एक नया रूप गढ़ा। आपस के हितों की रक्षा ने लागों को एकता में बाँधें रखा। अंग्रेजों की लाख कोशिशों के बावजूद लोगों में फूट नहीं पड़ने दी गई ।

परम्परागत संचार माध्यम की समस्याएँ-

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त जब देश के विकास पंचवर्षीय योजनाओं का प्रारम्भ हुआ तब जनंसचार के आधुनिक साधनी सीमित थे। उनके राज्यों में ग्रामीण कलाकारों, शिक्षकों एवं विद्यार्थियों ने गर्मी की छुट्टियों में गाँव-गाँव जाकर इस माध्यम द्वारा चेतना जाग्रत करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। एक युग था जब परम्परागत माध्यमों से सम्बन्धित इन सम्प्रेषकों को सामाजिक मान्यता मिली हुई थी। इनकी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति का अप्रत्यक्ष दायित्व समाज का था। मालगुजार एवं राजे-महाराजे प्रमुख रूप से इनका पोषण करते थे। इनके प्रदर्शन के पूर्व रिहर्सल पर पूर्ण ध्यान दिया जाता था। लेकिन धीरे-धीरे तकनीक के विकास ने इतने विकल्प खोल दिए हैं कि परम्परागत साधनों के विकास की ओर से ध्यान हट गया है। वंशानुगत कठपुतली कला, नौटंकी इत्यादि का प्रायः लोप हो रहा है। आज इन माध्यमों को संरक्षण देना एक समस्या है।

निष्कर्ष-

जनसंचार का प्रवाह अति व्यापक एवं असीमित है। मार्शल मैकलुहान ने वर्तमान समाज में संचार माध्यमों की व्यापकता एवं प्रसार को देखते हुए 'संचार माध्यम ही संदेश' है-तक कह डाला। अर्थात सन्देश का अस्तित्व जनसंचार माध्यमों से अलग नहीं है। वर्तमानकाल में राजनीतिक शक्ति, अर्थ, शिक्षा आदि का संप्रेषण जनसंचार माध्यमों पर आधारित है। इस लिए आज जनसंचार माध्यम और समाज में गहरा और निकट सम्बन्ध है। इसी के द्वारा समाज की मनोदशा, विचार, संस्कृति एवं जीवन-दिशाएं नियंत्रित तथा निर्देशित हो रही है। जनसंचार के द्वारा व्यक्तियों के समाजीकरण की प्रक्रिया समाज में चलती रहती है।

इलैक्ट्रानिक माध्यमों (रेडियो टेलिविजन, टेलिफोन) का प्रयोग अशिक्षित लोगों के लिए अत्यधिक प्रभावी है क्योंकि पहुँच के हिसाब से ये माध्यम बहुत प्रबल हैं। धार्मिक तथा सांस्कृतिक संचार के लिए परम्परागत संचार माध्यम (कठपुतली,नौटकी, लोक नृत्य, लोक गीत) अधिक उपयुक्त हैं।

संदर्भ-

1. अग्निहोत्री गुरू रामप्यारे, *विन्ध्य प्रदेश का इतिहास,* आलोक प्रेस, रीवा, विक्रमी संवत २०४०
2. डॉ. मुश्ताक अली-*आधुनिक पत्रकारिता,* २००।
3. डॉ. हरिमोहन-*रेडियो और दूरदर्शन पत्रकारिता,* आगरा
4. डॉ. अर्जुन तिवारी-*जनसंचार और हिन्दी पत्रकारिता,* साहित्य भवन आगरा, १९९९
5. अर्जुन तिवारी-*ई-जर्नलिज्म,* साहित्य भवन, आगरा.